B.N. College, Bhagalpur

A Constituent unit of Tilka Manjhi Bhagalpur University

Department of History

Topic : Political system of Vedic Period (PPT)

Prepared by : Sri Pinku kumar
Asst. Professor (Dept. of History)
B.N. College Bhagalpur
Contact (whatsApp) no- 7982166260
Email id- kpinku348@gmail.com

वैदिक कालीन राजनीतिक व्यवस्था

❖ऋग्वैदिक काल में कुल अथवा परिवार राजनीतिक संगठन की मौलिक इकाई थी तथा इसका प्रमुख कुलप अथवा गृहपति होता था। अगली इकाई ग्राम या गांव थी जिसका प्रधान ग्रामणी होता था। विश अथवा गांवों के समूह का प्रमुख विशपति होता था। सबसे बड़ी इकाई जन अथवा कबीला था।

❖ऋग्वेद में 'जन' शब्द का उल्लेख 275 बार हुआ है जबकि 'विश' 110 बार तथा 'ग्राम' सिर्फ 13 बार देखने को मिलता है। 'कुल' शब्द स्वतंत्र रूप से एक बार भी उल्लेखित नहीं है लेकिन 'कुलप' एक बार मिलता है।

❖उत्तर वैदिक काल में कई जनों (कबीलों) ने मिलकर राष्ट्रीय जनपदों का निर्माण किया तथा इस प्रकार कबीलाई सत्ता का विस्थापन क्षेत्रीय सत्ता द्वारा हुआ।

❖वैदिक कालीन राजनीतिक व्यवस्था को हम निम्न शीर्षकों में बांट कर अध्ययन कर सकते हैं। -

ऋग्वैदिक काल 1500 - 1000 BC

राजा

- ऋग्वैदिक काल में समाज कबीले के रूप में संगठित था, कबीले को जन भी कहा जाता था। कबीले या जन का प्रशासन कबीले का मुखिया करता था, जिसे 'राजन' कहा जाता था। इस समय तक राजा का पद आनुवंशिक नहीं था।
- राजा वास्तविक अर्थों में नहीं था। राजा की पहचान उसके कबीले के साथ होती थी। इसी कारण उसे 'जनस्यगोपा' कहा गया है।
- राजा का कर्त्तव्य युद्ध में सेना का नेतृत्व करना और कबीले के लोगों की रक्षा करना था। राज्य का स्वरूप राजतंत्रात्मक था तथापि राजा के निर्वाचन की भी चर्चा मिलती है।

राजा

❖कबीले के लोग स्वेच्छा से राजा का कर देते थें। इसे ‘बलि’ कहा जाता था। 'राष्ट्र' की क्षेत्रीय अवधारणा धीरे-धीरे विकसित हो रही थीं क्योंकि ऋग्वेद के 10 वें मण्डल में राजा से 'राष्ट्र' की रक्षा करने को कहा गया है। राजा कोई भी निर्णय कबायली संगठनों के सलाह से लेता था।

नौकरशाही

❖राजा की सहायता हेतु पुरोहित, सेनानी, एवं ग्रामणी नामक प्रमुख अधिकारी थे। प्रायः पुरोहित का पद वंशानुगत होता था।

❖ऋग्वैदिक काल में स्थायी नौकरशाही एवं स्थायी सेना का विकास नहीं हुआ था। लड़ाकू दल के प्रधान ग्रामणी कहलाते थे।

जनतांत्रिक संस्थाएं

- ऋग्वैदिक काल में सभा, समिति, विदथ तथा गण जैसी कुछ जनतांत्रिक संस्थाएं (कबीलाई संस्थाएं) अस्तित्व में थी । अथर्ववेद में कहा गया है कि सभा और समिति प्रजापति की दो पुत्रियाँ थी।

सभा

- सभा की उत्पत्ति ऋग्वेद के उत्तरकाल में हुई थी। यह वृद्ध (श्रेष्ठ) एवं अभिजात (संभ्रान्त) लोगों की संस्था थीं। यह समिति की अपेक्षा छोटी थी। अथर्ववेद में सभा को एक स्थान पर 'नरिष्टा' कहा गया है, जिसका शाब्दिक अर्थ अनुलंघनीय है। इससे ज्ञात होता है कि सभा द्वारा लिया गया निर्णय अनुलंघनीय होता था।
- इसके अध्यक्ष को सभापति कहा जाता था। सभा का प्रमुख कार्य न्याय प्रदान करना था। ऋग्वेद में 8 बार ‘सभा’ की चर्चा की गई है।

समिति

- यह एक आम जनप्रतिनिधि सभा (केन्द्रीय राजनीतिक) थी। समिति राजा का निर्वाचन करती थी तथा उस पर नियन्त्रण रखती थी। इस समिति के अध्यक्ष को कोपति या ईशान कहा जाता था।
- समिति में राजकीय विषयों पर चर्चा होती थी तथा सहमति से निर्णय होता था। शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने के लिए एवं प्रशासनिक स्थिति सुदृढ़ करने हेतु राजा को समिति के समर्थन की आवश्यकता होती थी। इसमें किसी भी निर्णय पर पहुँचने से पूर्व पर्याप्त वाद-विवाद अपेक्षित था।
- संभवतः समिति में राजनीतिक गैर-राजनीतिक विषयों पर भी चर्चा होती थी यह राष्ट्रीय एकेडमी का भी काम करती थी। ऋग्वेद में 9 बार समिति की चर्चा हुई है।

विदथ

- यह आर्यों की सर्वप्राचीन संस्था थी। इसे 'जनसभा' भी कहा जाता था। रॉथ के अनुसार 'विदथ' संस्था सैनिक, असैनिक तथा धार्मिक कार्यो से संम्बद्ध थी। ऋग्वेद में विद्थ का उल्लेख 22 बार हुआ है।
- इनके अनुसार विद्थ ऐसी संस्था थी जो युद्ध में लूटी गयी वस्तुओं अथवा उपहार और समय-समय पर मिलने वाली भेटों की सामग्रियों का वितरण करती थी। ऋग्वैदिक काल में स्त्रियाँ भी सभा और विद्थ में भाग लेती थी।
- इस प्रकार, सभा, समिति, विद्थ और परिषद् वैदिक राजतंत्र में सहायक के रूप में काम करती थी। ऋग्वेद तथा इस पर लिखे गए ब्राह्मण एवं ऐतरेय ब्राह्मण दोनों में राजा के निर्वाचन संबंधी सूक्त पाये जाते हैं।

उत्तरवैदिक काल 1000 - 600

निरंतरता के तत्व

- ❖राजनीतिक संरचना काफी हद तक कबीलाई ढांचे पर बनी रही। राजा अभी भी निरंकुश नहीं था, क्योंकि स्थायी सेना का विकास अभी भी नहीं हो पाया था। इस काल में भी नौकरशाही रक्त से संबंधित थे।
- ❖इस काल में भी सभा एवं समिति जैसी जनतांत्रिक संस्थाओं का अस्तित्व कायम रहा और यह संस्थाएं राजा पर अंकुश लगाने में सक्षम रही। प्रशासन की सबसे छोटी इकाई के रूप में 'कुल' की निरंतरता विद्यमान रही।
- दोनों कालों में न्याय प्रशासन के लिए कोई अधिकारी नहीं था। न्याय संभवतः ग्राम सभाओं द्वारा किया जाता था। वित्तीय सीमाओं के कारण राजा अपनी सेना नहीं रखता था। युद्ध के समय कबीलाई इकाईयों सेना प्रदान करती थी।

परिवर्तन के तत्व

- उत्तर वैदिक काल में राजनैतिक व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन दृष्टि-गोचर होता है। राजतंत्र सशक्त ही नहीं हुआ बल्कि बड़े प्रादेशिक राज्यों की स्थापना भी हुई एवं प्रशासनिक व्यवस्था में भी एक निश्चित पद्धति का आविर्भाव हुआ।
- पूर्व काल में विभिन्न जन, किसी निश्चित प्रदेश से जुड़े नहीं थे, किन्तु इस काल में जनों का स्थान बड़े जनपदों ने ले लिया था।
- व्यवस्थित कृषि के कारण राजनीतिक संरचना में परिवर्तन हुआ। अब राज्य का क्षेत्रीय आधार मजबूत हो गया जिसके फलस्वरूप जनपदों का निर्माण हुआ। अब राजा मात्र कबीले का शासक नहीं रहा बल्कि एक क्षेत्र पर शासन करने वाला हो गया।

परिवर्तन के तत्व-1

- अब राजा एकराट, सर्वजनिन जैसी उपाधियां लेने लगा। राजा के अधिकारों में बढ़ोतरी हुई। राजा अब 'बलि' बलपूर्वक प्राप्त करने लगा। लोहे के हथियारों के प्रयोग के कारण राजा की सैन्य शक्ति में वृद्धि हुई।
- राजा का पद भी अधिक स्थायी और वंशानुगत हो गया था। इस काल के साहित्य में ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं, जिनमें राजा के निर्वाचित होने का संकेत मिलता है। युद्ध अब गायों के लिए न होकर क्षेत्रों के लिए होने लगा।
- जब कर प्रणाली नियमित हो गई तो ऋग्वैदिक प्रशासनिक व्यवस्था में परिवर्तन हो गया। अधिकारियों की संख्या में वृद्धि हुई। कुछ अधिकारियों की शक्ति में कटौती हुई तो कुछ में वृद्धि भी हुई। उदाहरण के लिए ग्रामणी नामक अधिकारी की शक्ति में वृद्धि हुई एवं विशपति नामक अधिकारी की शक्ति में कटौती हुई।

परिवर्तन के तत्व-2

- शतपथ ब्राह्मण में रत्निनों की चर्चा है। रत्निनों की संख्या 12 थी जैसे - सेनानी, पुरोहित, ग्रामणी, संगृहित्री(कोषाध्यक्ष), भागदुघ (कर-संग्रहकर्ता) आदि।
- रत्निनों में राजा की महिषी (प्रधान रानी) भी सम्मिलित कर ली गई, उसे तत्कालीन प्रशासनिक व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। सैन्य संचालन का कार्य सेनापति सम्पादित करता था। सेनानी को राजा द्वारा हिरण्य भेंट-स्वरूप दिये जाने का उल्लेख मिलता है।
- राजपद का महत्व बढ़ा और राजत्व की अवधारणा पहली बार सामने आयी जिसका उल्लेख 'ऐतरेय' ब्राह्मण में हुआ है। क्योंकि राजा अब बल प्रयोगी होने के कारण लोकप्रिय नहीं रहा।
- अतः राजा के पद को न्याय संगत बनाने के लिए राजपद का आंशिक दैवीकरण भी हुआ और बहुत सारे अनुष्ठान जैसे राजसूय यज्ञ, वाजपेय यज्ञ आदि राजपद के साथ जुड़ गए।